समकालीन कविता में पर्यावरण प्रदूषण

डॉ. आर. पी. भोसले
कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय,
पुसेगाव तहसिल खटाव, जि. सातारा.
ईमेल-bhosalerajendra501@gmail.com

सारांश -

धरती पर प्रकृति के विविध तत्वों के बीच संतुलन तभी बना रह सकता है। पेड -पौधे ऋतुओं का संचालन करते है, प्रदूषण का अवशोषण करते है और वातावरण को स्वच्छ एवं सुंदर बनाए रखते है। किसी भी देश के लिए वन-प्रदेश परिस्थिति, आर्थिक और पर्यावरणिक संपदा के अक्षुण्ण भंडार होते है। लेकिन हमारे देश का दुर्भाग्य यह है कि अनेकनिक कारणों से जंगल का भारी विनाश हो रहा है। कवि यह महसूस करते ही कि पेड कुल्हाडी का प्रहार चुपचाप सहता रहता है। एक वृक्ष काटने का अर्थ है कि सामूची परंपरा और संस्कृति का विनाश होना। कवि की चेतावनी है कि प्रकृति जो सबकी व्यवस्थापक है, हम इस व्यवस्था में रहना और इस प्रकृति की गोद में पलकर बडा होना चाहते है। तो हमें भी एक पेड लगाना और उसका संवर्धन करना। पेडों को कटने से हमेशा बचाना ही है। वृक्ष अपनी संपूर्णतः के साथ हमारे जन-जीवन में रचे बसे हैं। जनसंख्या विस्फोट, औद्योगिकीरण, शहरीकरण और तकनीकी विकास के कारण हमारे देश के वन और वनों की अमूल्य संपत्ति अब विनाश के कगार पर है। आज हम देख रहे है, मनुष्य की अदम्य आकांक्षाओं के बुलडोजर धरती की बेरहमी से रौंद रही है, कुचल रही है, खोद रही है और उजाड रही है।

बीजशब्द : प्रकृति, पर्यावरण, विस्फोट, औद्योगिकीरण, शहरीकरण, प्रदूषण

प्रस्तावना:-

पर्यावरण भी समकालीन कविता की केंद्रीय चिंता का एक उल्लेखनीय पक्ष है। यह आकस्मिक नहीं है कि समकालीन कविता में पर्यावरण -प्रदूषण से उत्पन्न चिंताएँ भी जहाँ-तहाँ झाँकती हैं। अनेक कवियों का मानना है कि आज की अनेक समस्याएँ प्राकृतिक संतुलन के बिगडने से पैदा हुई है। औद्योगिक और नागरीकरण की अंधा दौड ने प्रकृति को इतना क्षत- विक्षत किया है, उसका खामियाजा हमें कई स्तरों पर भुगतना पड रहा है। मौसम चक्र के गडबडाने से लेकर ओजोन की पर्त में छेद हो जाने के हादसे मामूली नहीं है और इसके दुष्परिणाम दूरगामी है। हिंदी के अनेक कवियों ने पर्यावरण संबंधी चिंता व्यक्त की है कि जब तकनीकी सभ्यता धरती से स्नायू यंत्र को छिन्न-भिन्न करेगी, प्रकृति की स्वाभाविकता को नष्ट करेगी, तब धरती और प्रकृति विक्षुब्ध होगी ही। कवि त्रिलोचन, केदारनाथ सिंह, रामदरश मिश्र, अरुण कमल, अशोक वाजपेयी, चंद्रकांत देवताले, एकांत श्रीवास्तव, ज्ञानेन्द्रपति, शिशुपाल सिंह, कमलेश भट्ट कमल, विनोद पदरज जैसे समकालीन कवियों ने अपनी कविताओं में इस तथ्य को बखूबी उभारने की कोशिश की है।

अपने समय एवं समाज के प्रति संवेदनशीलता रखनेवाले समकालीन कवियों की चिंता व्यक्त की है कि हमारी हवा प्रदूषित हो रही है, पानी और मिट्टी जहरीली हो गयी है, जंगलों का विनाश हो रहा है, पेड-पौधे अधिक मात्रा में कट गए है और इन सबसे मौसम निरंतर बदलता जा रहा है। कवि शिशूपाल सिंह ने महाराष्ट्र के भूकंप का कारण प्रदूषण की विकृति मानते हुए लिखा है-

"फल रहा है प्रदूषण विकृति और विक्षोभ
यथास्थिति से कहाँ मुक्ति
कब तक चलेगा यह निर्मम चक्र
नहीं चाहिए मुझे एक और लातुर।"[1]

हिंदी के अनेक कवियों ने हमारी शाश्वत प्रकृति है, जिसमें पहाड हैं, चट्टाने हैं, टीले हैं, पत्थर हैं, नदी- झीले हैं, पेड- पौंधे और वनस्पतियॉ हैं, उन सबके प्रति संवेदनाएँ प्रकट की हैं। प्रकृति में मनुष्य के जो अतिरिक्त हस्तक्षेप है, उनसे उत्पन्न समस्याओं के प्रति समकालीन कवि सचेत हैं। कवि ज्ञानेन्द्रपति के 'संशयात्मा' काव्य संग्रह की अनेक कविताएँ झारखण्ड के पहाडों का अरण्यरोदन सुनते हुए पहाडों की अंधाधुंध कटाई का चित्रण किया है -

"अब आएँगे पर्वतों के पंख काटने वाले वज्रधर इंद्र के वंशज
अपनी फटफटिया में भडभडिया में और फटाफट धडाधड
चालू हो जाएँगे क्रशर, बारुद की गंध फैल जाएगी हवा में

उनके टूटने की गंध फैल जाएगी हवा में
उनके टूटने की गंध के ऊपर
और वे बोल्डरों में गिट्टियों में खंड-खंड हो जाएँगे।"[2]

नदी हमारे लिए माँ है, जीवन प्रदान करनेवाली है, वनस्पतियॉ देने वाली है और यहाँ तक कि हमारी संस्कृति को बनाने वाली भी है। आज ह्मारा देश पानी के भारी संकट का सामना कर रहा है। "कवि ज्ञानेन्द्रपति नदी को लेकर इतनी चिंता इसलिए प्रकट कर रहे है, ताकि गंगा या कोई भी नदी अब वैसी पावन, निष्कलुष और प्रदूषण मुक्त नहीं रहती है। हमारी नदियाँ, झीलें यहाँ तक की भूमिगत जल स्त्रोत भी प्रदूषित होते जा रहे हैं।"[3] कवि डॉ. लखनलाल सिंह को अपने गाँव में कहीं कोई नमी दिख नहीं पडती, सब कहीं एक अजीब तरह का सूखा दिख पडता है।

"सूख गई है मेरे गाव की नदी
बरसात में भी नहीं आती उसमें बाढ
सूख गया है मेरे गाव का पीपल का पेड
बसंत में भी नहीं आते हैं उसमें पत्ते।"

अपनी कविताओं में पर्यावरण विमर्श के प्रति बडा सरोकार प्रकट करने वाले कवि आरोहो जी वायू, जल, नभ, समुद्र और यहाँ तक कि संपूर्ण प्रकृति के प्रति भी संवेदनशील होना ही समकालीनता की पहचान मान लेते है। यह सर्वविदित है कि धरती पर प्रकृति के विविध तत्वों के बीच संतुलन तभी बना रह सकता है, जब धरती का कम से कम 33% जंगलों से भरे हो। पेड -पौधे ऋतुओं का संचालन करते है, प्रदूषण का अवशोषण करते है और वातावरण को स्वच्छ एवं सुंदर बनाए रखते है। "किसी भी देश के लिए वन-प्रदेश परिस्थिति, आर्थिक और पर्यावरणिक संपदा के अक्षुण्ण भंडार होते है। लेकिन हमारे देश का दुर्भाग्य यह है कि अनेकनिक कारणों से जंगल का भारी विनाश हो रहा है। कवि यह महसूस करते ही कि पेड कुल्हाडी का प्रहार चुपचाप सहता रहता है।"[4] एक वृक्ष काटने का अर्थ है कि सामूची परंपरा और संस्कृति का विनाश होना। कवि की चेतावनी है कि प्रकृति जो सबकी व्यवस्थापक है, हम इस व्यवस्था में रहना और इस प्रकृति की गोद में पलकर बडा होना चाहते है। तो हमें भी एक पेड लगाना और उसका संवर्धन करना। पेडों को कटने से हमेशा बचाना ही है। वृक्ष अपनी संपूर्णतः के साथ हमारे जन-जीवन में रचे बसे हैं। जनसंख्या विस्फोट, औद्योगिकीरण, शहरीकरण और तकनीकी विकास के कारण हमारे देश के वन और वनों की अमूल्य संपत्ति अब विनाश के कगार पर है। आज हम देख रहे है, मनुष्य की अदम्य आकांक्षाओं के बुलडोजर धरती की बेरहमी से रौंद रही है, कुचल रही है, खोद रही है और उजाड रही है।

आधुनिक युग में वायु प्रदूषण एक जटील समस्या बन चुकी है। अनेक कारखानों और विभिन्न प्रकार की गाडियों से मानव स्वास्थ्य को खराब करनेवाली कार्बनडाई ऑक्साईड, कार्बन मोनाऑक्साईड, हाईड्रोजन सल्फाईड, क्लोरिन, अमोनिया, आदि और औद्योगिक धूल और फैक्टरियों से निकलने वाले धुआँ और राख भी हमारी जीवन रक्षक वायु को प्रदूषित कर रहे है। बढते हुए वायू प्रदूषण के कारण ही ओजोन परत में छिद्र होने लगता है। यह ओजोन अल्ट्रावायलट किरणों को छानकर पृथ्वी पर आने से रोकती है। वायू प्रदूषण के कारण वायुमंडल द्वारा सूर्य की किरणों से उष्मा ग्रहण कर रोकने की क्षमता बढती जा रही है। वायुमंडल का तपमान बढने के कारण पहाडों और नार्थ पोल पर बर्फ के पिघलने तथा समुद्रतल के आयतन में वृद्धि होने का खतरा बढता जा रहा है।

वायू प्रदूषण के साथ-साथ ध्वनि प्रदूषण भी एक गंभीर समस्या बन चुकी है। शोर एक अदृश्य, परंतु प्रदूषण का अत्यंत घातक माध्यम है। जैसे-जैसे शोर बढ रहा है, वैसे ही मानसिक बिमारियाँ भी बढ रही है। शोर मानव द्वारा रचित प्रदूषण है और आज गिरफ्त बढती ही जा रही है। आज के कवि वर्तमान की क्रूर विडम्बनाओं का चित्रण करते समय अपने ऊपर अनेक दबावों को महसूस कर रहे है। इन सबके ऊपर वैश्वीकरण की नई संस्कृति का दबाव है। पूँजीवादी मानसिकता, वैश्वीकरण, बाजारवाद आदि के सम्मिलित रूप ने एक अमानवीयकरण को जन्म दिया है, जिसका बुरा असर न केवल मनुष्यों पर ही नहीं बल्कि नदी, पेड- पौधे, पशु-पक्षी, और यहाँ तक कि समूची प्रकृति पर भी प्रभाव पडा है। आज सचेतन प्राणी को अच्छे वातावरण में या जीवनदायी वातावरण में रहने का अवसर भी नहीं मिलता है। कवि एकांत श्रीवास्तव अपनी 'नागरिक व्यथा' शीर्षक कविता में इस स्थिति का चित्रण किया है-

"किस ऋतु का फूल सूँघूँ, किस हवा में सांस लूँ
किस डाली का सेब खाऊँ, किस सोते का जल पियूँ
पर्यावरण वैज्ञानिकों! कि बच जाऊ।"[5]

निष्कर्ष -

अंत में कहा जा सकता है कि पर्यावरण का प्रदूषण ही समाज में अन्य प्रकार के कई प्रदूषणों को जन्म दे रहा है। प्राकृतिक संतुलन को असंतुलिन न किया जाए, पेड, नदी, पहाड आदि को विकास के नाम पर विकृति के शाप न सौंपा जाए। यदि प्रकृति अनाचार को नहीं सह पायी तो इसके परिणाम संपूर्ण मानव समाज के लिए भयानक सिद्ध होंगे। आज समकालीन कवि चाहते है कि प्राकृतिक संतुलन को असंतुलित न किया जाए। भूमंडलीकरण, बाजारवाद, आर्थिक उदारीकरण, निजीकरण की वापसी और उपभोक्तावाद के बुरे प्रभावों की छाया में आज की कविता जन्म लेती जा रही है।

संदर्भ सूची -

1. शिशुपाल सिंह, 'एक और लातूर' शीर्षक कविता से, गंध, मार्च, 1994, पृ. 47
2. ज्ञानेन्द्रपति, 'संशयात्मा', अभिव्यंजना, प्र.,प्र.सं. 2010, दिल्ली, पृ. 27
3. डॉ. बाबू जोसेफ, 'समकालीन हिंदी कविता और कुमार अंबुज', अमन प्र., प्र. 2010, कानपुर, पृ. 27
4. वही, पृ. 30
5. एकांत श्रीवास्तव, 'अन्न है मेरा शब्द', पृ. 104